

संस्कृति और अर्थविज्ञान के परिपेक्ष में शब्दों का अर्थ-परिवर्तन: हिंदी के संस्कृत तत्सम शब्दों के आधार पर

<sup>1</sup>H. I. Prematilake

<sup>1</sup>Department of Hindi Studies, University of Kelaniya, Kelaniya, Sri Lanka.

hasip191@kln.ac.lk

**Article Info**

**Article history:**

Received: 29.08.2022

Accepted: 03.01.2023

Available Online

**Keywords:**

अर्थ-परिवर्तन

अर्थविज्ञान

हिंदी भाषा

संस्कृत तत्सम शब्द

*Semantic Changes*

*Semantics*

*Hindi Language*

*Sanskrit Loan Words*

**ABSTRACT**

भाषा एक मानसिक प्रकृया है। भाषा शब्द-समूह द्वारा बनी हुई है जो उस भाषा की संस्कृति का प्रतिनिधित्व करती है। हर भाषा एक भाषा प्रणाली में चली जाती है। हिंदी भारोपीय परिवार की भारत-ईरानी शाखा की भाषा है तथा उसकी मातृ भाषा संस्कृत है। इसलिए हिंदी में संस्कृत के तत्सम शब्द अधिक मात्रा में पाये जाते हैं, फिर भी कभी-कभी उनका पूरी तरह मूल अर्थ में प्रयोग नहीं होते। क्योंकि मनुष्य के भावों और विचारों में कुछ-न-कुछ परिवर्तन होता रहता है। मनुष्य के उन मानसिक परिवर्तनों के कारण शब्दों के अर्थ में भी परिवर्तन उभर आते हैं। इसलिए प्रस्तुत शोध का उद्देश्य रहा कि शब्दों के अर्थ-परिवर्तन का अध्ययन करना। शोध-प्रश्न यह था कि संस्कृत तत्सम शब्द होते हुए भी हिंदी भाषा-व्यवहार में उनके अर्थ मौलिक संस्कृत अर्थ से किस प्रकार बदल जाता है। दत्त-सामग्री-संग्रहण मुख्य रूप से साक्षात्कार और कशब्दकोश, विश्वकोश तथा पुस्तकों के माध्यम से किया गया। इस अध्ययन के परिणामस्वरूप किसी शब्द के सही अर्थ की पहचानने के लिए शब्द की सांस्कृतिक पृष्ठभूमि का अध्ययन करने का महत्व और संस्कृति के अनुसार शब्द का अर्थ बनने की विधि आदि पहचाने जा सकते हैं। तदनुसार यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि संस्कृति और अर्थविज्ञान के संदर्भ में संस्कृत तत्सम शब्दों के अर्थ बदल जाता है।

Language is a mental process. A language is made up of a set of words that represent the culture of that language. Every language goes into a language system. Hindi is the language of the Indo-Aryan branch of the Indo-European family and its mother language is Sanskrit. That is why loan words of Sanskrit are found in greater quantity in Hindi, yet sometimes they are not used in their original meaning. Because there is some or another change in the feelings and thoughts of humans. Due to those mental changes in humans, changes also emerge in the meaning of words. Therefore, the present study aimed to study the semantic changes in words. The present study focuses on that having Sanskrit loan words, how their meaning changes from the original Sanskrit meaning in general usage of the Hindi language. Data were collected mainly through interviews, and tertiary data were collected through dictionaries, encyclopedias, and books. As a result of this study, to identify the true meaning of a word, the importance of studying the cultural background of the word and the method of making the meaning of the word according to the culture can be identified. Accordingly, it can be concluded that the meaning of

Sanskrit equivalent words changes in the context of culture and semantics.



## 1. प्रस्तावना

### 1.1 अर्थविज्ञान

भाषा एक पद्धति है, जिसमें किसी-न-किसी तरह एक दूसरे से जुड़े हुए विभिन्न अवयवों की एक व्यवस्था होती है। भाषा पद्धति के अंतर्गत चार गौण पद्धतियाँ (sub-systems) आती हैं— ध्वनि, शब्द, वाक्य और अर्थ। भाषाविज्ञान के अधीन उन चार गौण पद्धतियों को एक अमूर्त संकल्पना के रूप में लेकर उनका विस्तृत एवं गंभीर अध्ययन किया जाता है। अध्ययन की दृष्टि से भाषाविज्ञान के चार प्रणालियाँ होती हैं। वे हैं— ध्वनि-विज्ञान, पद-विज्ञान, वाक्य-विज्ञान और अर्थ-विज्ञान। अर्थ भाषा की आत्मा है। शब्द शरीर है। ध्वनि-विज्ञान, पद-विज्ञान, वाक्य-विज्ञान भाषा के शरीर हैं। इसमें भाषा के शरीर या बाह्य रूप का विश्लेषण विवेचन किया जाता है। अर्थविज्ञान में शब्दार्थ के आंतरिक पक्ष का विश्लेषण विवेचन किया जाता है। अर्थ क्या है, अर्थ का ज्ञान कैसे होता, शब्द और अर्थ का क्या संबंध है, मन में बिंब निर्माण कैसे होता है, अर्थ परिवर्तन की दिशाएँ, अर्थ परिवर्तन के कारण, शब्दों के अर्थ-घटक (semantic components)<sup>2</sup> (Brown, 1976, p. 381), एकार्थक और अनेकार्थक शब्द के अर्थ का निर्माण, प्रत्येक शब्द का अर्थ-क्षेत्र<sup>3</sup> आदि अर्थविज्ञान के बाहर पक्ष हैं। जैसे कि नाम से स्पष्ट है कि अर्थविज्ञान अर्थ का विज्ञान है। इसमें भाषा के अर्थ पक्ष (शब्दार्थ और वाक्यार्थ) का वैज्ञानिक अध्ययन-विश्लेषण किया जाता है। अर्थविज्ञान वर्णनात्मक, ऐतिहासिक तथा तुलनात्मक इन तीनों प्रकारों का होता है।

प्रत्येक शब्द का अर्थ उस समाज में रहनेवाले लोगों के द्वारा निश्चय किया जाता है। शब्द और अर्थ का संबंध यह है कि एक शब्द का अर्थ मनुष्य को किसी पदार्थ या क्रिया का बोध कराता है। पदार्थ और उसके नाम का कोई अनिवार्य और अभिन्न संबंध नहीं है। शब्द कई ध्वनियों के समन्वय से बना हुआ है। शब्द स्वयं वह पदार्थ नहीं है जो किसी की ओर संकेत भर देता है। ऐसे शब्दों को बाधित उत्तेजक कहा जाता है। (शर्मा, 1961, पृ. 68) उदाहरण के लिए हिंदी में 'माँ' शब्द कहने पर अपनी जन्मदात्री का बोध होता है। सिंहली लोगों को यही बोध 'अम्मा' कहने से और अंग्रेजों को 'ममी' कहने से होता है। 'माँ' या 'अम्मा' या 'ममी' शब्दों की ध्वनियों में कोई ऐसा गुण नहीं है जो वास्तव में जननी के गुणों को प्रतिबिंबित करता है। दूसरी ओर से एक ही शब्द का प्रयोग कई भाषाओं में विविध अर्थों में हो सकता है, जैसे 'आशा' शब्द का अर्थ हिंदी में 'उम्मीद' और सिंहली में 'इच्छा' होता है। 'मिन' शब्द का अर्थ वेल्स भाषा में 'कोना', अरबी में 'से', हिंदी में 'धीमा स्वर' और सिंहली में उसका अर्थ 'मछली' तथा भाषा भाषा में 'वेदना' है। उस प्रकार एक ही शब्द को विभिन्न प्रकार के अर्थों से प्रयुक्त होता है। उसमें केवल शब्द के प्रयोग के संबंध में समाज की एक सामूहिक स्वीकृति होती है जो भाषा का एक लक्षण है।


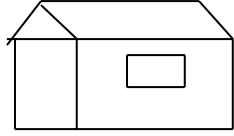
<sup>1</sup> फर्डिनेंड दि सुसोइ के अनुसार भाषा के वैज्ञानिक अध्ययन में साधारण बोलचाल की भाषा (parole) का आंतरिक सिद्धांत (langue) बाहर लेकर उसका अध्ययन किया जाता है जो भाषाविज्ञान का विषय-क्षेत्र होता है। इसलिए भाषा विज्ञान में मूर्त भाषा (parole) की चर्चा नहीं की जाती तथा उसमें मूर्त या भौतिक भाषा का अप्रत्याशित अमूर्त भाषा (langue) का अध्ययन किया जाता है।

<sup>2</sup> एक शाब्दिक इकाई (lexical unit) के अर्थ का एक संभावित भेदक अंग 'अर्थ-घटक' कहलाता है। उदाहरण— (क) एक शाब्दिक इकाई दूसरे से अलग करना, जैसे 'पुरुष' एक विपरीतार्थक घटक है जो पुरुष को स्त्री से अलग करता है और लड़के को लड़की से। (ख) एक समूह के प्रत्येक सदस्य में उपलब्ध रहना, जैसे 'मनुष्य' एक अर्थ-घटक है जो पुरुष, स्त्री, लड़के और लड़की के लिए प्रयोग किया जाता है।

<sup>3</sup> उदाहरण— 'बसगाड़ी' का अर्थ-क्षेत्र यातायात के साधन है जो भूमिगत, जलीय और वायु मार्ग के यातायात साधनों में से भूमिगत यातायात साधनों के अंतर्गत आता है।

उससे स्पष्ट है कि जब किसी पदार्थ को आँखों से देखता है या कोई शब्द कानों से सुनता है, तब मन में उस शब्द के संबंध में परिस्थितिबोध जो आकृति रचती है, वही उस शब्द का अर्थ होता है। एक-एक पदार्थ के लिए प्रयोग किये जानेवाले शब्द विभिन्न समाजों के जनसमुदाय द्वारा निर्धारित किये जाते हैं। इसलिए शब्दों के अर्थ स्थिर नहीं रहते। भाषा भाषी के इच्छानुसार वे बदल जाते हैं। (देखिए तालिका 1)

तालिका 1. शब्द और उसके अर्थ के बीच का संबंध

भाषा-रूप या शब्द-संकेत	प्रस्ताव या पदार्थ
आदमी – man/human	
घर – home/house	

एक ही मानव आकृति के लिए हिंदी में 'आदमी' और अंग्रेजी में 'मैन' शब्द का प्रयोग किया जाता है। मकान के लिए हिंदी में 'घर' और अंग्रेजी में 'होम' या 'हाउस' शब्द का प्रयोग किया जाता है। तालिका से पुनः स्पष्ट है कि शब्द और अर्थ का संबंध अटूट और अभिषेक नहीं है।

एक भाषा से दूसरी भाषा में किसी पाठ का अनुवाद करते समय अंतरण की प्रक्रिया में विचार की स्थिरता कहीं नहीं रहती। यदि शब्द और अर्थ निरपेक्ष रूप में अभिन्न हों, तो एक विचार को एक से अधिक भाषा में प्रकट ही नहीं किया जा सके। अनुवाद करते समय दोनों भाषाओं की समान शब्दावली जिन वस्तुओं की ओर संकेत करती है, वे वस्तुएँ और उनसे हमारे स्नायुतंत्र का संबंध ही वह मूल आधार है, जिसके कारण एक भाषा का सहारा छोड़ते हुए दूसरी भाषा की शब्दावली तक पहुँचने की अवधि में अर्थ लुप्त नहीं हो जाता। (शर्मा, 1961, पृ. 68) परंतु सांस्कृतिक भिन्नताओं के कारण किसी भाषा के सांस्कृतिक शब्दों<sup>4</sup> (Newmark, 1988, p. 95) का अनुवाद करते समय अनुवाद की लक्ष्य भाषा के शब्दों का अभाव होना स्वाभाविक है, क्योंकि वे विशिष्ट शब्द केवल उस समाज की संस्कृति में पाये जाते हैं और उन शब्दों के सही अर्थ उस समाज की संस्कृति में ही घुले रहते हैं।

<sup>4</sup> किसी एक विशिष्ट समाज के व्यक्ति की जीवन-शैली की अभिव्यक्ति के लिए जिन भाषिक शब्दों का प्रयोग किया जाता है, वे सांस्कृतिक शब्द कहलाते हैं।

बच्चा जब पहले पहल बोलना शुरू करता है यानी शब्दों को ग्रहण करने की कोशिश करता है, तब सर्वप्रथम कुछ निरर्थक गूँ-गूँ, बा-बा आदि धनियाँ करता है। बौद्धिक क्षमता बढ़ने के साथ-साथ धीरे-धीरे वह ध्वनियों और उनके अर्थों का संबंध जोड़ने की शक्ति प्राप्त करता है। सार्थक शब्दों का उच्चारण करने से पूर्व वह उन परिचित शब्दों का अर्थ समझने लगता है। अगर बच्चे से पूछें की माँ कौन है, बाबू जी कौन है, कुत्ता कौन है और बच्चा कौन है, तो उनके उपस्थित रहने पर वह उनकी ओर उँगली उठा देता है। उच्चारण इंद्रियों की ठीक वृद्धि के बाद वह उन शब्दों का उच्चारण भी करने लगता है। उस प्रकार बच्चे के दिमाग में भाषा-शब्द के अर्थ का बोध शीघ्र हो जाता है। यह प्रक्रिया मुख्यतः श्रवण और स्पर्श द्वारा हो जाती है, जिसके कारण बहरे और अपंग बच्चों की भाषा-शक्ति में अधिकतर कमियाँ तथा दोष देखने को मिलते हैं।

अर्थ के अनुभव-जन्म होने के कारण यह संभव है कि एक ही भाषा बोलनेवाले किन्हीं दो व्यक्तियों के दिमाग में एक ही शब्द का अर्थ बिल्कुल एक न हो। (Balagalle, 2014, p. 31) उसके फलस्वरूप किसी शब्द के अर्थ की सीमा का निर्धारण करना असंभव है। अर्थ-निर्धारण का कार्य प्रत्यक्ष रूप से नहीं होता, क्योंकि भाषा में लगातार नये शब्द आते हैं; व्यवहार में शब्दों का दबाव होता है; व्यावहारिक शब्दों के अर्थ बदल जाते हैं और कभी-कभी सामाजिक समूहों के इच्छानुसार एक ही शब्द भिन्न अर्थों में व्यवहार में लिया जाता है। यह भाषा का सर्वसाधारण और स्वाभाविक लक्षण होता है, जिसे भाषा की परिवर्तनशीलता कहते हैं। ज्यों-ज्यों मनुष्य भाषा का प्रयोग करता है, त्यों-त्यों भाषा परिवर्तन होती रहती है।

उससे स्पष्ट होता है कि एक ही शब्द के विभिन्न अर्थ होते हैं और उनका निर्धारण प्रकरण करता है। जब कोई व्यक्ति किसी वाक्य में विशेष शब्द का व्यवहार करता है, तब वह उस शब्द के अनेक अर्थ होते हुए भी केवल एक अर्थ मन में रखकर बोलता है और प्रायः श्रोता भी उसे उसी अर्थ में ग्रहण करता है। (सक्सेना, 1947, पृ. 101) उदाहरण के लिए कोई लड़की यदि सुनार के पास जाकर कहे कि "मुझे सोना चाहिए", तो सुनार गहना दिखा देता है, अन्यथा सोने की जगह शय्या नहीं और जब लड़की रात में पढ़ते-पढ़ते अपनी माँ से कहती है कि "मुझे सोना चाहिए", तब माँ शय्या दिखा देती है, अन्यथा गहने नहीं। प्रकरण अर्थात् संदर्भ ही इस प्रकार शब्द के अर्थ का निर्णायक बन जाता है। व्यावहारिक दृष्टि से एक समय में शब्द का एक अर्थ उपस्थित रहता है और उस समय अन्य अर्थ प्रायः गायब से रहते हैं। साहित्यिक दृष्टि से जहाँ अपनी कला के प्रदर्शन के लिए वक्रोक्ति<sup>5</sup>, श्लेष<sup>6</sup> आदि अलंकारों का प्रयोग करते हैं, वहाँ की स्थिति अलग होती है और वह रचना की सुंदरता और गंभीरता बढ़ा देते हैं।

साधारणतया जब हम किसी अज्ञात भाषा को सुनते हैं, तब हमें उसके शब्दों को केवल एक जटिल एवं अस्पष्ट शब्द-समूह के रूप में लगने लगता है, लेकिन उस भाषा के भाषी उसी शब्द-समूह के प्रयोग से अपने अनेक प्रकार के अभिप्रायों को सफल बनाते हैं। अभिप्रायों की सफलता का साधन उस शब्द-समूह का अर्थ होता है। क्योंकि व्यर्थ शब्दों से अभिप्राय की पूर्ति नहीं होती। इसलिए किसी भी आवश्यकता को सिद्ध कराने की क्षमता प्रत्येक शब्द के अर्थ में समन्वय हुई है, जिसका आंतरिक पक्ष वैज्ञानिक दृष्टि से अध्ययन करना, विश्लेषण करना और समझना अर्थविज्ञान का कार्य है।

## 1.2 अर्थ-परिवर्तन की दिशाएँ

इस बात का अध्ययन करना महत्वपूर्ण है कि किन-किन दिशाओं में किसी शब्द के अर्थ में परिवर्तन हो सकता है। हिंदी के तत्सम शब्दों पर ध्यान देने से यह देख सकते हैं कि शब्द के अर्थ परिवर्तन की दिशाओं को 7 भागों में विभाजित किया जा सकता है।

### 1.2.1 अर्थ-विस्तार

जब शब्दों का अर्थ सीमित एवं संकुचित क्षेत्र से निकलकर स्वतः रूप से अधिक विस्तृत हो जाता है, तब उसे 'अर्थ-विस्तार' कहा जाता है। कुछ शब्द मूल रूप में किसी विशेष या संकुचित अर्थ में प्रयुक्त होते थे। बाद में उनके अर्थ का विस्तार हो गया। अर्थात् अर्थ-विस्तार की ओर प्रवृत्ति होने से एक शब्द अपने मौलिक अर्थ से परिवर्तित होकर उसके बाद नाना अर्थों में प्रयुक्त होने लगता है। अर्थ-विस्तार किस प्रकार होता है? — इस विषय पर संस्कृत के महान कवि भर्तृहरि ने लिखा है कि किसी समानता के आधार पर अर्थ का तदनु रूप प्रतिपादन होता है। (द्विवेदी, 1921, पृ. 106)

<sup>5</sup> वक्ता के द्वारा बोले गये शब्दों का श्रोता अलग अर्थ निकालना।

<sup>6</sup> वाक्य में कोई एक शब्द एक ही बार प्रयुक्त होने पर दो अर्थ निकालना।

उदाहरण के लिए संस्कृत का एक शब्द है 'तैल', जिसका मूल अर्थ था 'तिलों से निकलने वाले द्रव' जो इसका व्युत्पत्तिमूलक अर्थ था। हिंदी आदि आधुनिक भाषाओं का 'तेल' शब्द इसी 'तैल' शब्द से विकसित हुआ है, किंतु उसका अर्थ विस्तृत हो गया है। अब हर प्रकार के बीज से निकलने वाला द्रव 'तेल' हो गया है, जैसे— सरसों का तेल, मूँगफली का तेल, बादाम का तेल आदि। 'गवेषणा' शब्द प्रारंभ में 'गाय-चाहना' यानी 'गाय की इच्छा' के अर्थ में प्रयुक्त हुआ, फिर इसका अर्थ 'गय ढूँढ़ना' में परिवर्तन हुआ। अब उन पहले अर्थों में से 'गाय' अर्थ को छोड़कर केवल 'ढूँढ़ना' या 'खोजना' अर्थ रह गया। वर्तमान में 'शोधकार्य' के अर्थ में 'गवेषणा' शब्द का प्रयोग करते हैं। उस प्रकार शब्दों के प्रति प्रत्येक जनसमुदाय के व्यवहार के आधार पर शब्दों के अर्थ विस्तृत होने की संभावना होती है। उदाहरण के लिए संस्कृत में 'विहार' शब्द का अर्थ 'विचरण करना' और 'टहलना' था। पाली में वही शब्द 'निवास स्थान के बाहुल्य' (सक्सेना, 1947, पृ. 102) के अर्थ में बराबर के प्रयोग में आ गया और आज किसी प्रांत के 'बौद्ध विहारों' को परिचित करने के लिए 'विहार' शब्द का प्रयोग किया जाता है। संस्कृत के 'कुशल' शब्द का अर्थ था 'कुश लाना' या 'उखाड़ना'। कुश का अग्रभाग तीक्ष्ण होता है। उससे हाथ को छेदने या कटने का भय है। अतः कुश लाने की क्रिया 'चतुरता' का सूचक थी। उस अर्थ को लेकर 'तीक्ष्ण बुद्धि' को 'कुशाग्रबुद्धि' कहा जाता है। यह शब्द धीरे-धीरे कुश लाने का अर्थ छोड़कर 'चतुर' या 'निपुण' का अर्थ देने लगा। इस प्रकार 'कुशल' शब्द के अर्थ का विस्तार हो गया, जैसे— 'वह शास्त्रों में कुशल है', 'वह खेलने में कुशल है' आदि।

### 1.2.2 अर्थ-संकोच

यह अर्थ-विस्तार का ठीक उल्टा है। अर्थ-विस्तार के विपरीत कुछ शब्दों के अर्थ का संकोच होता है और उनका विस्तृत अर्थ संकुचित या सीमित हो जाता है। अर्थात् जब अर्थ-विस्तार को छोड़कर किसी शब्द का अर्थ सीमित क्षेत्र में प्रयुक्त होता है, तब उसे अर्थ-संकोच कहा जाता है।

उदाहरण के लिए संस्कृत के 'मृग' शब्द का मूल अर्थ 'साधारण पशु' था। पशुओं के राजा सिंह के लिए 'मृगराज' शब्द के प्रयोग में भी मूल 'पशु' अर्थ सुरक्षित हुआ है, किंतु आगे चलकर इस शब्द का अर्थ संकुचित हो गया और आज 'मृग' शब्द केवल 'हिरन' का वाचक है। पुरानी फारसी भाषा में भी 'मृग' शब्द का अर्थ, अर्थ-संकोच के कारण परिवर्तित हो गया है। पहले फारसी में 'मृग' का अर्थ था 'पक्षी'। लेकिन हिंदी, वंग आदि आधुनिक भारतीय आर्य भाषाओं में फारसी तद्भव शब्द 'मुर्गा' का प्रयोग 'मुर्गा पक्षी' के अर्थ में होता है, जैसे— मुर्गा, मुर्गी, मुर्गे के अंडे आदि। संस्कृत में 'दायद' का अर्थ था 'पैतृक बेटवारे में मिला धन'। वेदों में 'पशु' शब्द का अर्थ बहुत व्यापक है। शतपथ ब्राह्मण ने पाँच पशुओं में मनुष्य का भी उल्लेख किया है। यजुर्वेद में अग्नि, वायु और सूर्य के लिए भी 'पशु' शब्द का प्रयोग हुआ है। लेकिन आज इसका अर्थ केवल 'गाय, कुत्ता आदि पशु' ही रह गया है। 'नेत्र' शब्द का अर्थ था 'चमकनेवाला', 'प्रकाश करनेवाला', 'आगे चलनेवाला', 'ले जानेवाला'। बाद में 'नेत्र' शब्द का प्रयोग सिर्फ 'आँख' के अर्थ में करने लगा।

पारिभाषिक शब्द जो एकार्थ में किसी शास्त्र के उपयोग में व्यवहृत हैं — अर्थ-संकोच का परिणाम हैं। प्रत्येक शास्त्र के अध्ययन करते समय एक शब्द का केवल एक वैज्ञानिक अर्थ लिया जाता है, वरना प्रचलित और व्यावहारिक अर्थ नहीं।

### 1.2.3 अर्थादेश

अर्थ-परिवर्तन की यह पर्याप्त महत्वपूर्ण प्रवृत्ति है। इसमें यह क्रिया हो जाती है कि शब्द का मूल अर्थ तो लुप्त हो जाता है, फिर कोई नया अर्थ शब्द के साथ जुड़ जाता है। इस प्रकार एक अर्थ के लोप होने तथा नवीन अर्थ के सामने आ जाने को 'अर्थादेश' कहा जाता है। अर्थात् 'अर्थादेश' का तात्पर्य अर्थ में इतना अधिक अंतर होने से है कि मौलिक अर्थ खतम ही होकर दूसरा अर्थ उसकी जगह आ जाय।

उदाहरण के लिए संस्कृत के 'दैव' शब्द का ठीक उल्टा अर्थ ईरानी के 'दैव (देव)' शब्द से मिलता है। ऋग्वेद के कुछ पुराने भागों में 'असुर' शब्द का प्रयोग 'देवता' के अर्थ में हुआ है और इसी अर्थ में ईरानी भाषा में भी (अहुर) प्रयुक्त हुआ है। बाद में संस्कृत का यही शब्द 'राक्षस', 'दैत्य' आदि अर्थों का द्योतक हो गया और 'अ' उपसर्ग निषेधात्मक समझकर 'सुर' शब्द 'देवता' के अर्थ में ले गया। 'दूहितृ' शब्द का अर्थ 'दुहनेवाली' था जो वर्तमान में पूर्णतः लोप हो गया है। उसका प्रयोग अब 'कन्या' के लिए करते हैं। 'मौन' शब्द पहले 'मुनियों के विरुद्ध आचरण' के अर्थ में प्रयोग होता था। अब उसके बदले 'मौन' शब्द के अर्थ के रूप में 'चुप्पी साधन' प्रतिष्ठित हुआ है। पहले 'वर' शब्द का मुख्य अर्थ 'श्रेष्ठ' था और गौण अर्थ 'दूल्हा' था। वर्तमान में 'वर' शब्द का प्रयोग 'दूल्हा' के अर्थ में ही किया जाता है।

#### 1.2.4 अर्थोपकर्ष

यदि किसी शब्द का वर्तमान में प्रयुक्त अर्थ, पहले अर्थ की तुलना में उच्च या उत्कर्ष रूप से उपयोग किया जाता है, तो उसे 'अर्थोपकर्ष' कहा जाता है। उदाहरण के लिए संस्कृत की मूल अवधि में 'वीर' शब्द 'साधारण आदमी' के अर्थ में प्रयुक्त हुआ, परंतु बाद में वह शब्द 'वीरता से युक्त किसी आदरणीय व्यक्ति' के लिए व्यवहार होने लगा। 'गौ' शब्द अनेकार्थी शब्द है जो 'भूमि', 'जिह्वा', 'सूर्य-चंद्र', 'मांस', 'चर्म' आदि अनेक अर्थों में विस्तार हो गया है। इसलिए 'गौ' शब्द में अर्थोपकर्ष की विशेषता उपलब्ध होती है। (कौशिक, 1998, पृ. 131) प्राचीन काल में 'गाय' को 'माता', 'देवी' आदि शब्दों से पुकारा गया है और उसका शरीर सभी देवताओं का निवास-स्थान माना गया है। 'गोलोक' सभी लोकों से ऊपर माना है, जहाँ विष्णु निवास करते हैं।

#### 1.2.5 अर्थापकर्ष

यदि किसी उच्च विचार या सामान्य विचार का अर्थ देने के लिए उपयोग किया गया शब्द बाद में कम विचार को प्रकट करने के लिए उपयोग किया जाता है, तो वह अर्थापकर्ष कहा जाता है। उदाहरण के लिए हिंदी के 'गँवार' और गुजराती के 'गमार' शब्द का पहले 'गाँव में रहने वाला आदमी' के अर्थ में प्रयोग हुआ, जबकि आज वे शब्द 'मूर्ख' या 'बुद्धि आदमी' के अर्थ में प्रचलित हो गये हैं। 'नग्न-लुंचित' का अर्थ था, 'जैन धर्म के परम आदरणीय संत या मुनि गण'। वर्तमान में उसका अर्थ 'नंगा' और 'लुच्चा' हो गया है। (शर्मा, 2007, पृ. 212) बहुधा शब्दों से स्पष्ट हो जाता है कि संस्कृत के तत्सम शब्दों में अधिक आदर और गौरव का भाव झलक आता है और उनकी अपेक्षा में तद्भव शब्दों में कम। उदाहरण के लिए 'गर्भिणी' शब्द 'गर्भवती स्त्री' या 'मानुषी' के अर्थ में जाना जाता है और उसका तद्भव शब्द 'गाभिन' का अर्थ है, 'मादा पशु, जिसके पेट में बच्चा हो'। 'ब्राह्मण' का अर्थ 'शिक्षित, ज्ञानी और पूज्य व्यक्ति' है। उससे विकृत 'बाम्हण' का अर्थ, 'सभी प्रकार के पढ़े-लिखे व्यक्ति' होता है। 'स्तन' का अर्थ 'स्त्री के पयोधर' है। उसके तद्भव शब्द 'थन' का अर्थ हुआ 'गाय के स्तन'।

#### 1.2.6 अर्थ विरोध

शब्द के किसी अर्थ का प्रयोग पहले होता था और बाद में उसका पूरी तरह विपरीत अर्थ से प्रयोग होने लगा, तो ऐसे तत्त्व को 'अर्थ विरोध' कहा जाता है। इस प्रकार के शब्द भाषा में कम पाये जाते हैं।

#### 1.2.7 अर्थानाश

'अर्थानाश' से अभीष्ट है कि शब्द के मूल अर्थ का अवरोह या पतन हो जाना अथवा अर्थ का पूरी तरह विनाश होकर अर्थशून्य हो जाना। यह भाषा की एक आम विशेषता है कि भाषा-विकास में कुछ शब्द के ध्वनि और अर्थों के क्रम में पतन होकर भाषा से गायब हो जाता है। ऐसी स्थिति में शब्दों के ध्वनि-परिवर्तन से शीघ्र अर्थ-परिवर्तन हो जाता है।

#### 1.3 अर्थ-परिवर्तन के कारण

मनुष्य के भावों और विचारों में कुछ-न-कुछ परिवर्तन हमेशा होता रहता है। मनुष्य के उन मानसिक परिवर्तनों के कारण शब्दों के अर्थ में भी परिवर्तन उभर आते हैं। इसलिए शब्दों का अर्थ-परिवर्तन पूर्ण रूप से मनुष्य की मानसिक क्रिया होती है। मन का संचालन कभी किसी रीति के अनुसार नहीं होता। उसके कारण अर्थ-परिवर्तन के निश्चित कारण अभिव्यक्त करना कठिन कार्य होता है और उन कारणों की कोई सीमा निर्धारित नहीं किया जा सकती। एक भाषा से दूसरी भाषा में शब्द लेते समय यह शायद कभी होता है कि उन शब्दों का अर्थ तनिक भी नहीं बदलता। बहुत-से शब्दों के अर्थ उपर्युक्त अर्थ परिवर्तन के किसी-न-किसी कारणों में से एक या एक से अधिक कारणों के अनुसार बदल जाते हैं। मुख्य रूप से अर्थ परिवर्तन के निम्नलिखित कारणों को प्रस्तुत किया जा सकता है—

### 1.3.1 अन्य भाषाओं के शब्द, विचार आदि अपनाना

भाषा हमेशा अन्य भाषाओं के शब्द से पुष्ट होती है। ऐसे आगत शब्दों के अर्थ बाद में उस विशिष्ट समाज की आवश्यकतानुसार बदल जाते हैं। उदाहरण के लिए 'गंगा' शब्द का प्रयोग संस्कृत और अन्य भारत-ईरानी भाषाओं में 'भारत की गंगा नदी' के लिए व्यक्तिवाचक संज्ञा के रूप में किया जाता है। वह मूल 'गंगा' शब्द जब सिंहली में तत्सम शब्द के रूप में अपनाया गया, तब उसके मूल अर्थ में परिवर्तन होकर प्रत्येक नदी के लिए सिंहली में 'गंगा' शब्द का प्रयोग होने लगा। संस्कृत भाषा में 'मोह' शब्द का अर्थ है 'मूर्खता', 'भ्रम' धोखा आदि। फिर भी मलयालम भाषा में 'मोह' शब्द प्यार को सूचित करता है।

### 1.3.2 एक भाषिक समाज कई शाखाओं में बाँट जाना

जब कई आधुनिक भाषाओं की तुलना एक दूसरे से करते हैं जो एक मूल भाषा से विकसित हो गयी हैं, तब यह देख सकते हैं कि मूल भाषा के कुछ शब्दों के पुराने अर्थ उसकी विकसित भाषाओं में ज्यों का त्यों देख नहीं पाते। तुलनात्मक भाषाविज्ञान की दृष्टि से अध्ययन करने पर यह स्पष्ट होता है कि यद्यपि शब्दों की ध्वनियों में ज़्यादा परिवर्तन नहीं हुआ है, तथापि उनके अर्थ के संदर्भ में अनेक प्रकार के परिवर्तन हुए हैं। उदाहरणतया संस्कृत के 'वाटिका' शब्द के गुजराती तद्भव शब्द 'वाडी' का अर्थ होता है 'बगीचा'। उसका बंगाली तद्भव शब्द 'बाडी' है जो 'घर', 'गृह' आदि अर्थ सूचित करता है (Taraporewala, 1932, p. 83) और सिंहली तद्भव शब्द 'वाडी' से 'पड़ाव', 'अड़्डा' जैसे अर्थ प्रतीत होते हैं। संस्कृत 'गृह' शब्द के बंगाली शब्द 'घर' का अर्थ 'कमरा' होता है। वहाँ हिंदी और सिंहली में 'गृह' शब्द के मूल अर्थ में परिवर्तन नहीं हुआ है।

### 1.3.3 वातावरण का बदलाव

वातावरण के परिवर्तनों के अनुसार शब्दों का अर्थ-परिवर्तन भौगोलिक, सामाजिक और भौतिक के रूप में तीन भागों में विभाजित किया जा सकता है। शब्दों का अर्थ परिवर्तन प्रायः शब्द को व्यवहार होने वाले भौगोलिक क्षेत्र के परिवर्तनों के परिणामस्वरूप तभी होता है, जब एक भाषा-समुदाय के कुछ लोग अपनी मातृभूमि को छोड़कर दूसरी जगह बस जाते हैं। (Sankaravelayuthan, 2018, p. 48) मूल निवास के पेड़-पौधे, पशु-पक्षी के कुछ सामान, पर कुछ आसमान वस्तुओं को परिचय कराने के लिए एक-दूसरे से मिलते-जुलते नामों का प्रयोग किया जाता है, तब अधिकतर शब्दों का अर्थ-परिवर्तन हो जाता है। उदाहरण के लिए अंग्रेजी शब्द कॉर्न (corn) से इंग्लैंड में 'गेहूँ', अमेरिका में 'मक्का' और आयरलैंड में 'बाजरा' पहचाने जाते हैं। वैदिक युग में 'ऊष्ट्र' शब्द 'भैंस' के लिए प्रयोग किया गया था। बाद में वह 'ऊँट' के अर्थ में प्रयुक्त शब्द बन गया। इससे स्पष्ट होता है कि 'ऊष्ट्र' शब्द का अर्थ-परिवर्तन उन लोगों द्वारा किया गया है जो भैंस के निवास करने वाले क्षेत्र से हटकर ऊँटों के शेष में आकर बसे थे। यद्यपि अंग्रेजी में 'फादर', 'मदर', 'सिस्टर' आदि शब्द साधारण रूप से रिश्ते को सूचित करने के लिए प्रयुक्त होते हैं, तथापि वे शब्द ईसाई परिस्थिति में 'पादरी लोगों' को परिचित कराने के लिए और अस्पताल की परिस्थिति में 'उपचारिका' के लिए प्रयुक्त होते हैं, जैसे- गिरजाघर की मदर, अस्पताल की सिस्टर आदि। ये शब्दों के अर्थ परिस्थितिबद्ध साधारण अर्थों से भिन्न हैं।

### 1.3.4 विचारों को अधिक स्पष्ट करने के लिए वर्णनात्मक भाषा शैली का प्रयोग

जब किसी व्यक्ति को अपना कोई विचार अधिक स्पष्ट करने की आवश्यकता होती है, तब अपनी बात में उपमा, रूपक आदि अर्थालंकारों का प्रयोग किया जाता है। पहले अलंकारों के रूप में प्रयुक्त उन शब्दों का उसी प्रकार निरंतर व्यवहार करने के कारण कालांतर में वे मूल रूप से अलग होकर भाषा के आम शब्द या पदबंध बन जाते हैं। यह प्रत्येक भाषा की विशेषता होती है।

### 1.4.5 अशोभन के स्थान पर शोभन भाषा शैली का प्रयोग

भारोपीय भाषा परिवार की अधिकतर भाषाओं के माध्यम पुरुष सर्वनाम की उत्पत्ति इसलिए हुई कि उन भाषा-भाषी समाजों की जनता में प्रतिष्ठित व्यक्ति को संबोधन करते समय सम्मति तथा आदर प्रकट करने की इच्छा होती है। हिंदी में 'आप', 'तुम'

आदि सर्वनामों और 'नमस्ते', 'नमस्कार', 'प्रणाम', 'कैसे हैं', 'माता जी', 'पिता जी', 'बाबू जी', 'सेठ जी' आदि बहुवचन शब्दों से गौरव का भाव अभिव्यक्त किया जाता है। धार्मिक कृत्यों में व्यवहार करने वाली भाषा में इसके लिए उदाहरण के रूप में प्रस्तुत किया जा सकता है, जैसे- फूल चढ़ाना, पानी चढ़ाना, अर्पित करना, प्रसाद ग्रहण करना आदि।

### 1.3.6 सटीक अर्थ से अज्ञात होकर शब्दों का प्रयोग

अर्थात् शब्द का अर्थ सही ढंग से न जानने के कारण या शब्द के बारे में स्पष्ट विचार मन में न होने के कारण या असावधान के कारण या शब्दों के गलत प्रयोग के कारण शब्दों का अर्थ-परिवर्तन हो जाता है। शब्दों का अर्थ ठीक न समझकर बार-बार उनके गलत प्रयोग करने से कालांतर में वे शब्द अपना अस्तित्व पाकर कोई विशेष अर्थ प्रकट करने वाले शब्द बन जाते हैं। उदाहरण के लिए 'असुर' शब्द का पहला अर्थ था 'देव'। बाद में उस शब्द के मूल 'अ-' कार को अर्थ बाधक उपसर्ग के रूप में समझा गया। 'सुर' शब्द को 'देव के अर्थ में और 'असुर' शब्द को 'देव के विरुद्ध भूत विशेष' के अर्थ में माना गया।

### 1.3.7 सुविधा के लिए शब्दों का लघु उच्चारण

किफायत, सुविधा, झटपट बोलना, उच्चारण की शीघ्रता आदि के कारणवश दीर्घ शब्दों का लघु बनाकर उच्चरित किया जाता है। साथ-साथ एक शब्द या कतिपय शब्दों के पदबंध या वाक्य में उच्चारण न करके छोड़ देना, कुछ शब्दों के केवल एक भाग का उच्चारण करना आदि त्रुटियों के कारण शब्दों के अर्थ-परिवर्तन होते हैं। उदाहरण के लिए बांग्ला भाषा के बहुत-से मूल शब्द उस प्रकार लघु बनाकर प्रयोग किये जाते हैं। विशेषतः व्यक्तिगत नामों में यह विशेषता देखने को मिलती है। यथा- चट्टोपाध्याय- चटर्जी, भट्टोपाध्याय- बनर्जी, मुखोपाध्याय- मुखर्जी। और कई उदाहरण इस प्रकार दिये जा सकते हैं- आस्तिनमृग- हस्तिन् (हाथी), रेलवे स्टेशन- स्टेशन, कॉपी बुक- कॉपी, नेकटाई- टाई, कैपिटल सिटी- कैपिटल आदि।

### 1.3.8 अतिशयोक्ति युक्त आंतरिक भावनाओं की अभिव्यक्ति

जब मनुष्य अपने आंतरिक विचार एवं भावनाएँ प्रकट करते हैं, तब उन्हें अतिशयोक्तिपूर्वक कहना मनुष्य का स्वभाव है। उसी के कारण जब अपना कोई साधारण भाव प्रकट करता है, तब 'बहुत', 'बड़ा', 'विशाल', 'अति', 'अत्यंत', 'श्रेष्ठ', 'उत्तम', 'गंभीर', 'भयानक', 'घातक' आदि प्रविशेषणों का प्रयोग किया जाता है। ये शब्द किसी गंभीर अर्थ में विशेष अवसर पर प्रयुक्त न होकर आम अर्थ को प्रकट करने के लिए निरंतर प्रयुक्त होने के कारण उनके अर्थों का महत्व लुप्त हो जाता है। उदाहरण- वे बहुत उत्तम पुरुष हैं जिन्होंने मेरी मदद की। (यहाँ 'उत्तम पुरुष' का प्रयोग किसी साधारण व्यक्ति के लिए किया गया है, वरना उसमें बुद्ध या राम के गुण नहीं होते। 'उत्तम पुरुष' यहाँ अतिशयोक्ति वर्णन है।)

### 1.3.9 व्यंग और लाक्षणिक प्रयोग

शब्दों द्वारा व्यंग्यार्थ और लक्षणार्थ प्रकट करने से भी शब्दों का अर्थ-परिवर्तन होता है। (देखिए तालिका 2)

तालिका 2. व्यंग्यार्थ और लक्षणार्थ के लिए उदाहरण

व्यंग या लक्षण	अर्थ
पूरा पंडित	मूर्ख
युधिष्ठिर के पूरे अवतार	असत्यवादी
धर्मावतार	अधर्मी



लक्ष्मीपति	दीन-हीन
बड़े पढ़ाकू बन रहे हैं	वास्तव में बिल्कुल नहीं पढ़ता
तुम तो गधे हो	मूर्ख
वह तो गाय है	बेचारा
मेरा बेटा तो शेर है, शेर!	अत्यंत निडर और शक्तिशाली

## 2. शोध-विधि

इस शोध में दत्त-सामग्री एकत्र करने के लिए दो मुख्य विधियों के रूप में प्राथमिक दत्त-सामग्री और सहायक दत्त-सामग्री का उपयोग किया गया। साक्षात्कार का उपयोग प्राथमिक दत्त-सामग्री के रूप में किया गया और शब्दकोश, विश्वकोश तथा पुस्तकों का प्रयोग सहायक दत्त-सामग्री के रूप में किया गया। शोध में एकत्रित दत्त-सामग्रियों का विश्लेषण गुणात्मक विश्लेषण के माध्यम से प्रस्तुत किया गया। इसके अतिरिक्त, दत्त-विश्लेषण को अर्थ परिवर्तन के सात तरीकों- अर्थ-विस्तार, अर्थ-संकोच, अर्थादेश, अर्थोपकर्ष, अर्थापकर्ष, अर्थ-विरोध, अर्थानाश के माध्यम से किया गया।

## 3. विश्लेषण

भारतीय संदर्भ में हिंदी भाषा के चयनित संस्कृत तत्सम शब्दों के अर्थ परिवर्तन का विश्लेषण इस प्रकार किया गया है।

### 3.1 आत्मा

‘आत्म’ संस्कृत का शब्द है। ‘आत्म’ शब्द हिंदी में आकर ‘आत्मा’ बन गया। यह शब्द मुख्य रूप से धार्मिक परिस्थिति से संबंधित शब्द होता है। ‘आत्मा’ अर्थात् ‘आत्मन्’ भारतीय दर्शन के महत्वपूर्ण सिद्धांतों में से एक है। हिंदू धर्म आतंकवादी धर्म है, इसलिए यह शब्द उपनिषदों की मूलभूत विषयवस्तु के रूप में आता है। आत्मा का अर्थ होता है अंतर तत्त्व। प्रत्येक मनुष्य के अंदर उसकी आत्मा रहती है। हिंदू संप्रदाय के अनुसार प्रत्येक व्यक्ति, पशु, पक्षी, जीव, जंतु आदि सभी प्राणी आत्मा है और ईश्वर परमात्मा (परम+आत्मा) होते हैं। धर्म के अनुसार आत्मा जब परमात्मा से मिलती है, तभी वह ईश्वर को प्राप्त करती है। आत्मा अमर है। वह न कभी जन्म लेता और न उसका विनाश होता। वह केवल अपना शरीर बदलती है।

‘न तो यह शरीर तुम्हारा है और न ही तुम इस शरीर के हो। यह शरीर पाँच तत्त्वों से बना है: अग्नि, जल, वायु, पृथ्वी और आकाश। एक दिन यह शरीर इन्हीं पाँच तत्त्वों में विलीन हो जाएगा।’

भगवत गीता

वेद, पुराण और गीता के अनुसार आत्मा अजर और अमर है। आत्मा एक शरीर धारण करके जन्म और मृत्यु के बीच नये जीवन का उपभोग करती है। पुनः शरीर के जीर्ण होने पर शरीर को छोड़कर चली जाती है। आत्मा का यह जीवन-चक्र जब तक चलता रहता है, तब तक वह संसार से मुक्त नहीं होती या उसे मोक्ष नहीं मिलता। आत्मवादियों की मान्यता है कि आत्मा का अस्तित्व है और वह कभी नष्ट नहीं होती। पुनर्जन्म में मनुष्य की वही आत्मा केवल अलग रूप का शरीर धारण करके इस संसार में रहती है। भक्ति-साधना और परम निष्ठा के माध्यम से ईश्वर या ब्रह्म को प्राप्त करने के बाद ही आत्मा इस संसार से मुक्ति पा लेती है। हिंदू धर्म के अनुसार आत्मा के तीन स्वरूप माने गये हैं कि जीवात्मा, प्रेतात्मा और सूक्ष्मात्मा। जो भौतिक शरीर में वास करती है, उसे जीवात्मा कहते हैं। जब इस जीवात्मा का वासना शरीर में निवास करता है, तब उसे प्रेतात्मा कहते हैं। आत्मा जब सूक्ष्मतम शरीर में प्रवेश करता है, तो उसे सूक्ष्मात्मा कहते हैं।

व्यवहार की दृष्टि से 'आत्मा' शब्द के साथ हिंदी में ऐसे शब्द प्रचलित हैं जो अधिकतर उसी के वाच्यार्थ 'स्वयं' से संबंधित हैं, जैसे— आत्मकथा, आत्मकथन (अपनी जीवन की कहानी), आत्मकृत (स्वयं किया हुआ), आत्मगौरव (अपना गौरव), आत्मघातक (आत्महत्या करनेवाला), आत्मगत (मान के भीतर का), आत्मसंवाद (खुद से बातें) करना आदि।

### 3.2 कहानी

'कहानी' शब्द संस्कृत 'कथन' शब्द का तद्भव रूप है। 'कथन' से संस्कृत 'कथा' शब्द बन गया। 'कथा' का अर्थ है कहानी, कल्पित कहानी, वर्णन, हाल आदि। 'कथा' शब्द संस्कृत 'कथ्' धातु से बना है, जिसका अर्थ है बताना, समाचार देना, वार्तालाप करना, वर्णन करना आदि। 'कथा' वर्तमान समय में 'कहानी' हो गयी है। पहले कहा जा चुका कि 'कथन' शब्द से 'कथा' एवं 'कहानी' शब्दों की उत्पत्ति हुई। 'कथन' शब्द से 'कहन' शब्द बन गया जो 'कथन' का तद्भव रूप है। 'कहन' का अर्थ होता है कहना, वचन, उक्ति, वर्णन आदि। यह शब्द देवनागरी का 'थ' वर्ण और 'त'+ 'ह' ध्वनियाँ मिलकर बना है। 'कथ' से 'त' का लोप होने से 'कह' बच गया, जिससे कह, कहा, कहना जैसी क्रियाएँ बनीं।

प्रत्येक संस्कृति में अपने जनसाधारण को जीवन की नैतिकता, प्रज्ञा, मूल्य और धर्म आदि कथा के माध्यम से संप्रेषण करना आसान होता है। प्रत्येक संस्कृति के सदस्य अपने समाज की सामूहिक चेतनाओं को समझ लेते हुए समाज को जिस जिस दिशा में डालना चाहते हैं और जिस तरह के मूल्य, नैतिकता आदि की रचना करना चाहते हैं, उस तरह की कथाओं का निर्माण करते हैं, जिससे आम जन उससे जुड़ सके। उस संदर्भ में संस्कृति, सभ्यता या मानव की कथा भी एक प्रकार का कथाकथन (story telling) कहा जा सकता है जो पीढ़ी-दर-पीढ़ी आज तक बढ़-चढ़कर चला आ रहा है। कथाकथन को संस्कृत साहित्य में 'किस्सागोई' शब्द भी दिया गया है।

### 3.3 कुल

रघुकुल रीति सदा चली आयी

प्राण जायी पर वचन न जायी

यहाँ रघुकुल या रघुवंश भारत का एक प्राचीन सर्वश्रेष्ठ राष्ट्रीय कुल माना गया है। 'कुल' संस्कृत का तत्सम शब्द है। भारतीय संस्कृति में 'कुल' ऐसा समूह है जिसके सदस्यों में रक्त संबंध हो जो एक परंपरागत वंशानुक्रम बंधन को स्वीकार करता है। यदि एक कुल के लोग अपने पिता से अपनी अनुगत्ता बतलाते हैं, तो ऐसे समूह को 'पितृकुल' कहा जाता है। यदि वे माता के कुल से अपनी अनुगत्ता बतलाते हैं, तो ऐसे समूह को 'मातृकुल' कहा जाता है। भारत एक पुरुष प्रधान समाज होने के कारण साधारणतया पितृकुलों में संपत्ति के उत्तराधिकारी के नियम के अनुसार पिता से पुत्र को संपत्ति का उत्तराधिकार मिलता है। एक कुल में बहिर्विवाह के नियम का पालन होता है। नियम के अनुसार एक ही कुल के लोगों में विवाह नहीं करना चाहिए। सामान्य रूप से एक कुल में कई वंश होते हैं, इसलिए कुल के बाहर विवाह करने का तात्पर्य वंश के बाहर भी विवाह करना है। कुल, वंश, जाति, पीढ़ी— ये शब्द बहुत मिलते-जुलते हैं, फिर भी अर्थ की दृष्टि से इनमें सूक्ष्म अंतर है, जिन्हें स्पष्ट पहचानना महत्वपूर्ण है। कुल, वंश, गोत्र, जाति ये सब सांस्कृतिक संकल्पनाएँ होती हैं। वंश ऐसी अनेक प्रजातियाँ हैं जो एक दूसरे से अधिकांश लक्षणों में समानताएँ दर्शाते हैं, जैसे— राजपूत वंश, कुलहंता वंश आदि। हिंदू समाज में प्रचलित ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र आदि वर्णाश्रम धर्म भी कुल के रूप में जाने जाते थे, जिसका निर्धारण अपने पूर्वज वंश से संबंध होता था और हिंदू मान्यता के अनुसार ये कुल ब्राह्मणों का निर्माण थे।

### 3.4 गाय

'गाय' शब्द संस्कृत की 'गो' धातु का तद्भव रूप है। हिंदू संस्कृति में गाय पवित्रता और परमार्थ का प्रतीक है। महर्षि गौतम ने वृद्ध गौतम स्मृति में गौ के शरीर में सभी देवताओं तथा तीर्थों का निवास बताया है।

पितरों वृषभः ज्ञेय गावो लोकस्य मातरः।

तासां तु पूजया राजन पूजिता पितृमातरः॥

इस पाठ का अर्थ ऐसा है कि वृषभ यानी भैंसे को पिता रूप और गाय को माता का रूप बताया गया है। इसकी पूजा करने से माता-पिता की भी पूजा हो जाती है। भारतीय संस्कृति में 'गाय' मात्र एक पशु नहीं है, उसे माँ के समान माना जाता है। अतः उसे गौमाता का नाम भी लिया जाता है। 'गाय' शब्द के पर्याय के रूप में हिंदी में 'धेनु' शब्द का प्रयोग किया जाता है,

जिससे 'सारी संपत्ति देनेवाला' का अर्थ बोध होता है। दूध, दही, घी, मक्खन, मलाई, गोबर, गोमूत्र आदि साधारण जनजीवन में काम आनेवाले ये सब गाय के दिन हैं। गाय के दूध, घी, दही, मूत्र और गोबर को पंचगव्य कहा जाता है। गाय भारतीय संस्कृत का प्रमुख अंग है। हिंदू लोग गाय की पूजा की जाती है। उसे समाज में एक देव के समान रखा जाता है। गोबर से बने कंड़े पर अग्नि प्रज्वलित करके घी और मीठा डालकर भोजन का पहला भाग अर्पित किया जाता है जिसे वैश्वानर या अग्यारी कहते हैं। भोजन करने से पूर्व पाँच रोटी या ग्रास निकाले जाते हैं। ये अग्नि, गाय, कुत्ता, कौवा, अतिथि को दिये जाते हैं। इसमें गोग्रास का विशेष महत्व है। सबसे पहली रोटी गाय को दी जाती है।

'गाय' शब्द के अतिरिक्त गोधूलि, गोपाल, गोष्ठ, गोष्ठी, गोप, गोवर्धन, गोत्र, गोशाला, गोदान आदि शब्द संस्कृत के 'गो' से बने हैं जो मूल गाय अर्थ से संपर्क होते हैं। उदाहरण के लिए 'गोत्र' शब्द का संबंध 'गो' से है। जिस समय वैदिक संस्कृति थी, उसमें एक गाँव के लोग अपनी गाय के झुंड के नाम से जाने जाते थे। उस समय देहाती समाज में गाय को अत्यधिक महत्व मिला और जिसके पास जितनी गायें थीं, उसका सम्मान इतना बढ़ गया। इस संदर्भ को लेकर उस गो समूह से उत्पन्न या उससे जुड़े हुए लोग गोत्र हो गये। भारतीय हिंदू संस्कृति में गाय को ईश्वर का स्थान दिया जाता है, क्योंकि शिव का वाहन गाय मानी जाती है। गाय को दैव्य मानने के कारण वह मनुष्य से कुछ दूर लगती है, क्योंकि उसे समाज में उत्तम स्थिति पर रखा जाता है।

### 3.5 गोधूलि

'गोधूलि' शब्द संस्कृत 'गो' धातु से बना है। गायें सुबह चरने के लिए जाती थीं। शाम को जब वे एक साथ लौटती थीं, तब उसके पैरों से आकाश में धूल उड़ती थी। उससे 'धुंधला' शब्द का निर्माण हुआ। गायें शाम को लौटने का समय मुहूर्तकारों को गोधूलि काल कहा गया। अर्थात् अँधेरे से यानी सूर्यास्त से ठीक पहले से समय को 'गोधूलि' कहा जाता है। उस समय सारा वातावरण सूर्य की किरणों की लालिमा के कारण सुनहरा बन जाता है। भारतीय संस्कृति में यह समय मांगलिक कृतियों के लिए श्रेष्ठ माना जाता है। शास्त्रों में विवाह आदि कार्य इस समय किया जाना शुभ बताया गया है। गोधूलि का समय लग्न के दोषों को दूर करता है। वह अष्टम भाव अर्थात् पापी भाव में गोचर करनेवाले ग्राहों से होनेवाले अनुष्यों से व्यक्ति को मुक्त रखता है। साथ ही जामित्रादि दोषों का नाश करता है। गोधूलि बेला का संबंध घर वापसी से होता है। गायों के साथ ग्वाले एवं अन्य जन भी घर लौटते थे, इसलिए ऐसी मान्यता थी कि घर के लोग एक दूसरे से मिलने के कारण साधारण दोष सहज ही नष्ट हो जाते थे। महत्वपूर्ण मांगलिक कार्य, विवाह में मुहूर्त ग्रंथाचार्यों ने वांछित मुहूर्त में शुद्ध विवाह लग्न न निकलने की स्थिति में गोधूलि लग्न को मान्यता दी है।

### 3.6 देव

'देव' शब्द संस्कृत की 'दिव्' धातु से बना है, जिसका अर्थ दिव्य होना है। देव परालौकिक शक्ति का पात्र है। इसलिए भक्तों में पूजनीय और अमर होता है। 'देव' शब्द के पर्याय के रूप में हिंदी में 'देवता' शब्द का भी प्रयोग किया जाता है। देव का स्त्रीलिंग शब्द देवी है। यह धार्मिक परिस्थिति में आनेवाला शब्द है। हिंदू एक प्रमुख देववादी धर्म है। हिंदू संस्कृति में देव यानी ईश्वर के निर्गुण और सगुण दोनों रूपों की पूजा की जाती है। वेदांग, भगवत गीता, वेद, उपनिषद् आदि के अनुसार सभी देवी-देवता एक ही परमेश्वर के भिन्न रूप हैं। ब्राह्मण ग्रंथों में देवों के बारे में विशद वर्णन मिलते हैं। उनमें प्रकाश और अंधकार तथा देव और असुर को पृथक वृत्ति के अंतर्गत न मानकर एक ही देवता से उत्पन्न दो पृथक तत्त्वों के रूप में किया है। सत और असत की कल्पना देव और असुर के रूप में की गयी और यह कहा गया है कि देवता को यज्ञ तथा स्वर्ग मिला और असुर को भूतल। वैदिक काल में प्राकृतिक शक्तियों को देव रूप में माना गया। उसके अंतर्गत तीन प्रकार के देवता बताये गये— स्वर में रहनेवाले अश्विन, सूर्य और वरुण; आकाश में रहनेवाले इंद्र और पुर्जन्य; पृथ्वी पर रहनेवाले सोम, अग्नि और बृहस्पति। हिंदुओं की मान्यता है कि प्रारंभ में ब्राह्मा और उनके पुत्रों ने धरती पर विज्ञान, धर्म, संस्कृति और सभ्यता का विस्तार किया। इंद्र, विष्णु, शिव आदि हिंदू देव हिंदुओं के सिरमौर माने जाते हैं। उसके अलावा राम, सीता, राधा, कृष्ण आदि भी देवता के रूप में पूजते हैं। हिंदी साहित्य में देवी-देवताओं को लेकर अति विस्तृत एवं अद्भुत अलंकृत साहित्य लिखा गया है। भगवत गीता, रामायण, महाभारत आदि धार्मिक ग्रंथों के रूप में माननेवाले महाकाव्यों में सर्वाधिक देवों के विशद वर्णन मिलते हैं। उसके अतिरिक्त सम्मानित व्यक्तियों के लिए आदरसूचक शब्द के रूप में भी 'देव' शब्द का प्रयोग किया जाता है, जैसे— गुरुदेव, पित्रदेव आदि।

### 3.7 धर्म

‘धर्म’ संस्कृत तत्सम शब्द है। जिसे धारण किया जाता है, वह ‘धर्म’ कहलाता है— धारयति इति धर्मा। भारतीय संस्कृति में धर्म के दस लक्षण बताये गये हैं। (देखिए तालिका 3)

तालिका 3. धर्म के दस लक्षण

धर्म का लक्षण	अर्थ
धृति	धैर्य
चमा	माफ करना
दमो	इंद्रियों पर दमन
अस्तेयम्	चोरी न करना
शोचम्	पवित्रता
इंद्रिय निग्रह	आत्मसंयम
धी	बुद्धि
विद्या	ज्ञान
सत्यम्	सत्य बोलना
अक्रोध	क्रोध न करना

मनुष्य जब अपने अंदर में धर्म के इन लक्षणों को धारण करता है, तब उसे धार्मिक होना कहा जाता है। इसलिए इस संदर्भ में हिंदू, बौद्ध, जैन आदि ‘धर्म’ नहीं, संप्रदाय अथवा अवतारवाद माने जाते हैं। वैसे भी हो व्यवहार में हिंदू, बौद्ध आदि संप्रदायों के साथ ‘धर्म’ शब्द का ही प्रयोग किया जाता है। हिंदू धर्म के अधीन आनेवाले पुरुषार्थ चतुष्टय में भी ‘धर्म’ शब्द आता है— धर्म, अर्थ, काम तथा मोक्ष। यहाँ धर्म का अर्थ होता है मनुष्य का धर्म यानी सब की सेवा करना। हिंदू धर्म सबसे प्राचीन माना जाता है। हिंदुओं के नियमों का सबसे प्राचीन ग्रंथ मनु ने लिखा है जिसे मानव-धर्म-शास्त्र अथवा मनुस्मृति कहते हैं। वैदिक युग में मंत्रोच्चारण, यज्ञ, प्रार्थना, पित्रपूजा को सही रूप से न समझने के कारण यह माना जाने लगा कि बहुत जटिल है, क्योंकि उसमें दार्शनिक सिद्धांत, उपासना, पूजा की विधि आदि का कठोर पालन करना था। इसलिए आम जन इन जटिल विधियों से मुक्ति पाने का उपाय सोचने लगा। सभी लोग वेदों को नहीं समझ सकते थे, इसलिए लोग जटिल कर्मकांड और बहुदेववाद का विरोध करने लगे। ऐसा माना जाने लगा कि विशुद्ध तथा पवित्र मानव देवताओं से श्रेष्ठ है। मानव का कर्म ही उसका भाग्य विधाता है और उचित आचार-विचार एवं सद्कर्म सबसे श्रेष्ठ हैं। संसार और कर्म की जटिलता से निकलने के साधन अहिंसा, व्रत तथा पवित्र आचार-विचार हैं। फलस्वरूप जटिल कर्मकांड, विधि, संस्कार, तंत्र-मंत्र की अधिकता, यज्ञवाद,

वेदवाद, धार्मिक साहित्य की पुष्टता और ज्ञान की कठिनाता आदि के कारण भारत में दो धर्मों का निर्माण हुआ कि हिंदू धर्म और बौद्ध धर्म। हिंदू धर्म को सुधारवादी संप्रदाय भी कहा जाता है। हिंदुओं के सूत्रग्रंथ के अंतर्गत भी 'धर्म' शब्द आता है। उसके अनुसार हिंदी में 'धर्म' शब्द से 'कर्तव्य' का अर्थ भी बोध होता है, फिर भी वह मूल से संबंध है। यथा— गोपाल विनम्रता को धारण करता है, तो गोपाल का धर्म होता है विनम्रता। माँ ममता को धारण करती है, तो माँ का धर्म होता है ममता यानी ममत्व या अपनापन। उस प्रकार जो भी धारण किया जाता है वह धर्म होता है। धर्म का मतलब स्वभाव भी है, जैसे— नमक का धर्म नमकीन है और चीनी का धर्म मीठा है। उस प्रकार कीड़े का धर्म अलग है और साँप का धर्म अलग है।

### 3.8 मंदिर

'मंदिर' शब्द संस्कृत तत्सम शब्द है। 'मंदिर' शब्द 'मन' और 'दर' की संधि से बना है। मन से तात्पर्य मानस है। दर का अर्थ द्वार होता है। मन के द्वार का अर्थ है जहाँ हम अपने मन का द्वार खोलते हैं, वह स्थान मंदिर है। यहाँ 'मन' शब्द में 'म' तथा 'न' ध्वनियाँ हैं। 'म' का अर्थ है 'मम' अर्थात् 'मैं' तथा 'न' का अर्थ है 'नहीं'। जिस स्थान पर जाकर मनुष्य अपना ममता या अहंकार को दूर करता है, वह स्थान मंदिर होता है। हिंदू धर्म के संदर्भ में जहाँ 'मैं' न रहकर ईश्वर हों, वहाँ मंदिर है। इसमें मन में शांति की अनुभूति होती है। 'मंदिर' शब्द का शाब्दिक अर्थ घर है। व्यावहारिक दृष्टि से हिंदू देवालय को मंदिर कहा जाता है। यह आराधना और पूजा अर्चन के लिए निश्चित की गयी जगह है, जैसे— देवमंदिर, शिवमंदिर, कालीमंदिर, कृष्णमंदिर आदि। मंदिर को द्वारा भी कहते हैं, जैसे— रामद्वारा, गुरुद्वारा आदि। साथ-साथ उसके लिए 'आलय' शब्द का भी प्रयोग किया जाता है, जिसका अर्थ है स्थान या घर, जैसे— शिवालय, जिनालय आदि। पहले 'द्वारा' शब्द किसी भगवान, देवता या गुरु से, 'आलय' शब्द केवल भगवान शिव से और 'मंदिर' या 'स्तूप' शब्द ध्यान-प्रार्थना से संबंधित थे। वर्तमान में उक्त सभी स्थानों को हिंदी में मंदिर कहा जाता है, जिसमें किसी देव की मूर्ति की पूजा की जाती है। इसलिए मन से दूर रहकर साकार ईश्वर के सामने उनके गुण की आराधना या ध्यान करने का स्थान मंदिर कहलाता है। हिंदू शिक्षा के अनुसार जिस तरह हम जूते उतारकर मंदिर में प्रवेश करते हैं, उसी प्रकार हमको मन का अहंकार भी बाहर छोड़ देना चाहिए।

### 3.9 विद्या

'विद्या' संस्कृत का शब्द है जो 'विद्' धातु से उत्पन्न हुआ है। विद्या का सामान्य अर्थ है जानना या समझना। विदित होने से विद्या होती है, इसलिए विद्या का अर्थ है ज्ञान, विज्ञान, शिक्षा, तर्क करना आदि। विद्या और अध्ययन दो भिन्न प्रक्रियाएँ हैं। 'अधि' और 'अयन' दो शब्दों के जोड़ने से अध्ययन शब्द बना है। विशिष्ट ढंग से जिसे देखा जाता है, वह अध्ययन होता है। हिंदू तत्त्वज्ञान में विद्या केवल बौद्धिक ज्ञान नहीं है जो वेदों से प्राप्त होता है। वह व्यक्ति की समझ की भी माँग करती है। 'विद्या' शब्द हिंदू धर्म में आध्यात्मिक ज्ञान से संदर्भित है। संस्कृत में 'विद्या' शब्द मुख्य रूप से सीखना, तत्त्वज्ञान, छात्रवृत्ति और किसी भी प्रकार के सही या गलत ज्ञान पर आधारित है। भारतीय शास्त्रों में यही संदर्भ प्रमुख रूप से स्वीकार किया गया है। विद्या शब्द के साथ 'अविद्या' शब्द भी साथ-साथ चलता है, जिसका अर्थ है विद्या से भिन्न ज्ञान जो यथार्थ से दूर है। धार्मिक संदर्भ में विद्या को ज्ञान की परिभाषा देने से गलत अर्थ प्रतीत होता है। विद्या के माध्यम से पूर्णता प्राप्त करने के बाद की स्थिति को ज्ञान कहा जाता है। कुछ लोगों के मतानुसार विद्या चार प्रकार की होती है— त्रयी विद्या, आन्वीक्षिकी विद्या, दंडनीति विद्या और वरम विद्या।

### 3.10 शास्त्र

'शास्त्र' संस्कृत तत्सम शब्द है जो 'सत्' धातु से बना है। शास्त्र का अर्थ है सुगठित ज्ञान, वैज्ञानिक ज्ञान, सुचरित ज्ञान इत्यादि। हिंदू धर्म के संदर्भ में शास्त्र ऋषियों और मुनियों के लिखे हुए प्राचीन ग्रंथों को कहते हैं, जिनमें सही और गलत को क्लासिक ढंग से विधि सम्मत और नीति सम्मत रूप से परिभाषित किये गये हैं। वेदों के अनुसार छह शास्त्र हैं— न्याय-शास्त्र, वैशेषिक-शास्त्र, सांख्य-शास्त्र, योग-शास्त्र, मीमांसा-शास्त्र और वेदांत-शास्त्र। व्यावहारिक दृष्टि से 'शास्त्र' शब्द का अर्थ होता है किसी विशिष्ट विषय से संबंधित वह समस्त ज्ञान जो ठीक क्रम से संग्रह करके रखा गया हो, जैसे— भौतिक-शास्त्र, वास्तु-शास्त्र, भूगर्भ-शास्त्र, विद्युत-शास्त्र, अर्थशास्त्र, वनस्पति-शास्त्र आदि। यहाँ शास्त्र का अर्थ होता है विद्या।

#### 4. निष्कर्ष

चयनित शब्दों के अध्ययन के उपरान्त स्पष्ट होता है कि प्रत्येक शब्द का अर्थ सदैव एक ही स्थिति में नहीं रहता। भाषा के शब्दों में समय-समय पर उपर्युक्त प्रकारों से अर्थ-परिवर्तन हो गया है। शब्दों का अर्थ-निर्धारण वक्ता की इच्छा के अनुसार होता है। वक्ता जब एक ही शब्द का अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए विभिन्न रूपों से प्रयोग करता है, तब शब्द के अर्थ में अंतर उत्पन्न हो जाते हैं और उन परिवर्तित अर्थों का लगातार प्रयोग करने से वे भाषा में स्थिर हो जाते हैं। साथ-साथ प्रत्येक शब्द उस भाषा में विशेष कार्य करता है और प्रत्येक शब्द उस भाषा में अपना महत्व रखता है, क्योंकि उन विशिष्ट शब्दों द्वारा ही उस संस्कृति का निर्माण किया जाता है। मानो भाषा और संस्कृति दो समानांतर रेखाओं पर लगातार अपनी यात्रा चलती हैं। भाषा से ही संस्कृति को समाज में उभर आता है। भाषा के विकास की दिशा संस्कृति द्वारा निर्धारण की जाती है। किसी शब्द के शुद्ध अर्थ को केवल उस संस्कृति की भाषा से अभिव्यक्त होता है। उस शब्द का अंतर्निहित संदर्भ किसी दूसरी भाषा के शब्द के माध्यम से दर्शाना असंभव है, क्योंकि तत्सम या तद्भव शब्द होकर भी एक भाषा किसी दूसरी भाषा के शब्द अपनाने के बाद अपनी संस्कृति का विशेष अर्थ उस शब्द को प्रदान करती है। इसलिए भाषा के प्रत्येक शब्द के अंदर उस शब्द की संस्कृति छिपी रहती है। शब्द की संस्कृति के उद्घाटन के बाद ही उस शब्द का असली अर्थ निकाला जा सकता है।

**अभिस्वीकृति:** अपना मूलस्वान समय इस शोधकार्य के समर्पित करने हेतु वरिष्ठ प्रोफेसर लक्ष्मण सेनेविरत्न जी (हिंदी अध्ययन विभाग, केलगिय विश्वविद्यालय), वरिष्ठ प्रोफेसर डब्ल्यू. राजपक्ष जी (भाषाविज्ञान विभाग, केलगिय विश्वविद्यालय), वरिष्ठ प्रोफेसर निमल मल्लावराची जी (सिंहली अध्ययन विभाग, केलगिय विश्वविद्यालय), वरिष्ठ प्राध्यापक बुद्धिका जयसुंदर जी (सिंहल अध्ययन विभाग, केलानिया विश्वविद्यालय), प्रोफेसर दुर्गा प्रसाद सिंह जी (सरकारी कॉलेज, पाली भाषा विभाग, राजस्थान), प्रो. बीना शर्मा जी (केंद्रीय हिंदी संस्थान, आगरा) का मैं आभार व्यक्त करती हूँ।

#### 5. संदर्भ सूची

- अलगियवन्न, पुवसति. (2004). *अलगियवन्न संस्कृत-सिंहल शब्दकोश*. कोलंबो 10: सूर्य प्रकाशन।
- कौशिक, जयनारायण. (1998). *दिल्ली अंचल की लोक संस्कृति*. दिल्ली: स्टार पब्लिशर्स.
- जयसेकर, अनंद और जयसेकर, चित्रा. (1970). *तुलनात्मक वाग्विद्याव*. मुद्रुनॉड: तरंग प्रकाशन।
- दुबे, शामचरण. (2016). *मानव और संस्कृति*. नई दिल्ली: राजकमल प्रकाशन।
- द्विवेदी, कपिलदेव. (1921). *भाषाविज्ञान और व्याकरणदर्शन*. इलाहबाद: हिंदुस्थानी एकेडेमी।
- प्रसाद, कालिका, सहाय, राजवल्लभ और श्रीवास्तव मुकुन्दीलाल. (1952). *बृहत हिंदी कोश*, वाराणसी: ज्ञानमंडल लिमिटेड।
- शर्मा, रामकिशोर. (2007). *भाषाविज्ञान हिंदी भाषा और लिपि*. अलहबाद: लोकभारती प्रकाशन।
- शर्मा, रामविलास. (1961). *भाषा और समाज*. नई दिल्ली: राजकमल प्रकाशन।
- सक्सेना, बाबुराम. (1947). *सामान्स भाषाविज्ञान*. प्रयाग: हिंदी साहित्य सम्मेलन।
- Balagalle, W, G. (2014). *Bhashi Sannivedanaya, Arta Vicharaya ha Upayogeeta Vicharaya*. Godage Publications.
- Brown, C. H. (1976). Semantic Components, Meaning, and Use in Ethnosemantics. *Philosophy of Science*, 43(3), 378–395. <http://www.jstor.org/stable/187232>
- Diver, W. (2012). The Elements of a Science of Language. In Huffman, A. & Davis, J. *Language: Communication and Human Behavior* (pp. 64-84). Brill.
- Li, P. J. K. (2014). Semantic shift and variation in Formosan languages. *Language and Linguistics*, 15(4), 465-477.
- Newmark, P. (1988) *A Textbook of Translation*. Prentice HaH International Ltd.
- Sankaravelayuthan, R. (2018). *An Introductory Course on Semantics and Pragmatics* [Unpublished doctoral dissertation].

- Stringer, D. (2019). Lexical semantics: Relativity and transfer. In Erdogan, N., & Wei, M. *Applied linguistics for teachers of culturally and linguistically diverse learners* (pp. 180-203). IGI Global.
- Taraporewala, S. (1932). *Elements of the Science of Language*. University of Calcutta.